खलु यत् संसारम् स्पृशति तदुपरि प्रभावं प्रक्षिपति अपरञ्चोद्धारयति। वासविक ब्रह्मणः प्रकार द्वयं वर्तते। तत्रैकः अनुभवातीतः द्वितीयश्च अनुभवगम्यः लौकिकः रूपद्वयं एकेनापरेण सह धनिश्ठ रूपेण सम्बद्ध एवं रूपेण गीतायाः बैशिश्टयाम् प्रतिपादयन् प्रथमाध्याये केन प्रकारेणोच्चतम् आत्मनि निवासम् कुर्तम शक्यतें तथा संसारे कार्यं कुर्तं शक्यते इति प्रश्न द्वयस्य यदुतरम् वर्तते तत् हिन्दु धर्मस्य परम्परागतोतरम् विघते।

अधिकृत पद संज्ञायाः दृश्टया गीता उपनिशद् कथ्यते यतोऽहि तन्मुख्य प्रेरणा तद् धर्मग्रन्थानाम् तत् महत्वपूर्ण समूहात् गृही तास्ति या उपनिशद् कथ्यते। यद्यपि गीता प्रभावपूर्ण तायाः गम्भीर सत्यस्य च यद्यपि सा मनुश्य मनसे नवीन मार्गस्य श्रोतं ददाति तथापि सा तनमान्यताः स्वीकृरूते या अतीत पुरूशाणां परम्परायाः एकोग्ड़ः अस्ति। इयं गीता तद् विचारान् अनृभूतिश्च भतिमत कुरूते केन्द्रीतञ्च कुरूते। यः तत्कालीन विचारशीलानाम् मानवानाम् मध्ये विकसिता भवतिस्म्। एतत् भ्रातृधातिनम् संधर्शम् उपनिशदान् प्राचीन ज्ञाने आधारितस्य एकस्य आध्यात्यिक संदेशस्य विकासार्थ पर्यप्तिावसरः सिद्धः।

तदनेकतवात्वानाम् हिन्दू धर्मान्तर्गते प्रतिस्पध तिवेन दशनम् जायते। तत्र एकस्थानात् आगतानाम् एकोन्मुक्त मध्ये एकोन्मुक्त विशाल सूक्ष्म गम्भीर सर्वाग्ड संपूर्ण समन्वये मेलयित्वा एकः स्वरूपम् कृत्तवान् विद्यतें। अस्मिन् आचार्यः विभिन्न विचारधाराः वैदिक बलिदान पूजापद्धतिम् उपनिशदाम् लोकातीत ब्रह्मशिक्षाः भगवतस्य ईश्वर वादं तथा करूणां संख्यस्य अदैतवादम् एवं योगस्य ध्यान पद्धतिम् अपि परिश्कृतान् चाकर। तथा इदमपि दर्शितवान् यत् केन प्रकारेण विभिन्न विचारधाराः एकोददेशम् गच्छति गुरूः हिन्दू जीवनस्य तथा तद् विचारस्य सर्वेशां जीवित् तत्वनाम् एकस्याम् सुगठितैकतायम् ग्रन्थनम् बलं प्रदाय समन्वयम् कृतवान्। अतः सर्व समन्वित इयं गीता स्पर्धा विहित ईश्र्या राग–द्वेश रहित सर्वापकारिता युक्तास्ति इत्यत्र न मतभेदः।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. गीतात्तत्वचिन्तन् – स्वामी आत्मानन्द
2. श्रीमद् भगवद्गीता (मूल ग्रन्थ)
3. श्रीरामकृश्ण परमहंस दर्शन
4. गीता सार्वभौमिक धर्म शास्त्रमेकम – लेखकः स्वामी रंगनाथानन्दः
5. श्री आदि भगवद्गीता–संकलनकर्त्ता तथा अनुवाद – श्री शान्ति प्रकाशकः
6. ऑन थौटस एण्ड ऐफोरिज्यज–क्लैक्टिड वर्क्स, शताब्दी संस्करण, खण्ड 10
7. ''सद्रधर्मपुण्डरीकः'' ''महायान् श्रद्धोत्पति''
8. हिस्बर्ट जर्नल

महात्मा गांधी का चम्पारण यात्रा

डॉ. विभा कुमारी*

अतीत के पन्नों में भारत की ह्रदयस्थली रहने वाला बिहार आधुनिक काल के आगमन के साथ ही ब्रीतानी उपनिवेशवाद तथा बंगाल के परिशिष्टवाद का शिकार बना। युगों के अंतराल में मानव प्रतिभा यहाँ अभिनव रूप में व्याप्त होती रही है। राष्ट्रीय संघर्ष के विभिन्न चरणों में इसने अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान किया है। वस्तुतः चम्पारण में ही महात्मा गाँधी ने भारत के नवीन राष्ट्रवाद का पहला सफल प्रयोग किया था। यह नया राष्ट्रवाद सत्य और अहिंसा, मानवता एवं विश्व प्रेम पर बल देने के कारण विशिष्ट था, उत्पीड़ित मानवता के हेतु इसमें एक नया सन्देश था। आजादी के लड़ाई की जब भी तूर्यनाद हुआ, बिहार ने अविलम्ब तथा पूरी निष्ठा के साथ उसमें भाग लिया।

जिस समय सारी दुनिया हिंसा और भौतिक शक्ति में विश्वास करती थी, ऐसे में बिहार के चम्पारण में महात्मा गाँधी के सत्याग्रह का उद्घोष ने सारी दुनिया को अचरच में डाल दिया। अंग्रेजों के शक्ति के आगे हिंसात्मक आन्दोलन ने गौतम बुद्ध और महावीर की भूमि पर अंग्रेजों के साथ–साथ बहुतेरे भारतीयों को भी संशय में रखा। इतिहास वह आईना है, जिसमें व्यक्ति, देश और समाज अपने अतीत को देखते हुए भविष्य को संवारने का प्रयास करता है। सम्भवतः कई सौ वर्षों की गुलामी के कारण भारतीय अपने प्राचीन परम्पराओं और गौरव को विस्मृत कर चुके थे, जबकि अंग्रेज पूरी तरह भौतिक के नशे में चूर थे। महात्मा गाँधी ने इस प्राचीन परम्पराओं को पुनः सत्याग्रह के रूप में जागृत किया।

गाँधी जी ने सत्याग्रह की परिभाषा देते हुए कहा कि, ''सत्य की निरन्तर खोज और सत्य तक पहुँचने का कृतसंकल्प''[1] वे कहते थे, 'सत्य साध्य है और अहिंसा साधन'[2] महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह का परीक्षण दक्षिण अफ्रीका में किया और उसको अस्त्र मानकर चम्पारण में प्रयोग किया। वे कहते थे कि, ''सत्याग्रह मनुश्य का जन्मसिद्ध अधिकार है।''[3]

उपजाऊ जमीन, हरे–भरे जंगल तथा पहाड़ी नदियों से परिपूर्ण, हिमालय की तराई में बसा बिहार का पश्चिमोत्तर सीमान्त जिला चम्पाचरण पुरातन काल से ही ग्राम्य–जीवन तथा कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का पोषक रहा है। यहीं कभी विस्मृत अतीत में दार्शनिक राजा जनक रहते थे। याज्ञवल्क्य एवं कतिपय अन्य ऋषि–महर्षि उनकी राजसभा को अलंकृत करते थे। उनकी तुलना हम कतिपय यूनानी राजाओं

***सीतामढ़ी, बिहार**

की राजसभा से कर सकते हैं, जहाँ एथेंस के विद्वान एकत्र होते थे। चम्पारण कभी लिच्छिवियों के प्रख्यात गणतन्त्र के अन्तर्गत था। चम्पाचरण के जंगल में नगर के कोलाहल एवं संघर्षों से दूर भारत के आत्मत्यागी ऋषि मानव–कल्याण हेतु तपस्या करते थे। कई स्थलों पर (लोरिया, नन्दगढ़, अरेराज) अशोक के स्तम्भ आज भी उसके धर्म एवं नीति के संदेशवाहक, सहिष्णुता एवं मानवीयता के प्रतीक के रूप में खड़े हैं। भारतवर्ष के अन्य भागों की तरह यह क्षेत्र भी अनेक शताब्दियों में राजनैतिक पटापेक्षों तथा उत्थान–पतन के कितने चरणों से गुजरा है। अंग्रेजी राज्य की छत्रछाया में आने के बाद से अन्य परिवर्तनों के साथ–साथ यूरोपीय व्यापारियों एवं निलहे साहबों के प्राणान्तक शोषण की दौर से इसे गुजरना पड़ा।

भारतीय नील की मांग अमरीकी स्वतन्त्रता संग्राम (1775–83) छिड़ने के फलस्वरूप उसके अमरीकी स्रोत बन्द हो जाने पर हुई और तब से नील भारत की अंग्रेजी कम्पनी के आयात की एक प्रमुख मुनाफ कमाने वाली सामग्री बन गई। फलतः देश में, विशेषकर बंगाल और बिहार में अनेक नील की कोठियाँ स्थापित हो गई। चम्पारण में यूरोपियों ने बेतिया और रामनगर राज से अस्थाई या स्थाई पट्टे पर जमीन लेकर नील की खेती शुरू की एवं कोठियाँ स्थापित की। यूरोपीय निलहों ने इस क्षेत्र में दो तरीके से नील की खेती करते थे– 1. जातीय 2. आसामीबार। आसामीबार व्यवस्था के अर्न्तगत नील खेती की सबसे अधिक प्रचलित तरीका ''तीन कठिया'' प्रणाली था। तीन कठिया प्रणाली चम्पारण में सर्वाधिक प्रचलित था। इसके अन्तर्गत रैयत को प्रति बीघा खेत में कट्ठे नील उपजाना अनिवार्य था तथा उसे अंग्रेजों द्वारा निर्धारित मूल्य पर बेचना पड़ता था। नील खेती के कारण जमीन बंजर हो जाती थी और किसान को नुकसान उठाना पड़ता था। इस पद्धति से किसान काफी शोषित हो रहे थे। डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी पुस्तक ''चम्पारण में महात्मा गाँधी'' में तीन कठिया व्यवस्था को रैयतों के अपार कष्ट का मुख्य कारण बताया।[4] डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद रैयतों के कष्ट का वर्णन ''आत्मकथा'' में करते हुए लिखते हैं, ''किसी भी रैयत की हिम्मत नहीं थी कि वह नील बोने से इंकार करे।[5] अगर कोई हिम्मत कर, इसके खिलाफ आवाज उठाता तो उस पर हजार तरह के जुल्म करके उसको मजबुर कर दिया जाता। घर और खेत लूट लिये जाते, खेत मवेशियों से चरा दिये जाते, जुर्माना वसुला जाता, पीटा भी जाता। अगर कोई इससे मुक्ति चाहता तो उससे नीलहे मनवाना मुआवजा वसूल सकते थे। अर्थात् रैयत एक ऐसी गुलामी की जंजीरों में बंध जाता था जिससे निकलना उसके लिए असम्भव–सा होता था।[6]

नीलहे साहबों के अत्याचारों से पीड़ित चम्पारण के रैयत जहाँ कहीं से भी सम्भव हो अपने उद्धार का मार्ग तलाश रहे थे। पीड़ित लोगों ने भारतीय राष्ट्रीय

कांग्रेस के मंच पर यह सवाल प्रस्तुत किया। इस क्रम में गांधी जी का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। इन लोगों ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 31 वें अधिवेशन दिसम्बर, 1916 के दरमियान लखनऊ में उनसे भेंट की थी। गांधी जी को चम्पाचरण लाने का श्रेय चम्पारण के किसान राजकुमार शुक्ल को है। श्री शुक्ल जिन्हें नीलहे साहबों की ज्यादतियों का व्यक्तिगत कटु अनुभव था, चम्पारण के किसान के प्रतिनिधि के रूप में लखनऊ कांग्रेस में भाग लेने गये थे। राजकुमार शुक्ल ने गांधी जी को नीलहे साहबों के अत्याचार की कहानी सुनाई जिसे सुनकर गांधी जी काफी आहत हुए। इस सम्बन्ध में गांधी जी के शब्द हैं, ''श्री शुक्ल बिहार के हजारों लोगों पर से नील के कलंक को धो देने को कृतसंकल्प थे।''[7] इस अधिवेशन के दूसरे दिन जब कांग्रेस ने इस अत्याचार के जांच का प्रस्ताव पास कर दिया तो तदुपरान्त बिहारी प्रतिनिधियों ने गांधी जी को चम्पारण आने का अनुरोध किया। गांधी जी ने आगामी मार्च या अप्रैल में चम्पारण की यात्रा करने का वचन दिया। इसमें राजकुमार शुक्ल का विशेष योगदान रहा। लखनऊ से लौटकर शुक्ल ने गाँधी जी के पास 27 नवम्बर, 1917 को एक पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने लिखा कि, ''आप दूसरों की दुःख गाथाँए रोज ही सुनते हैं। आज हमारी दुःखगाथा भी सुनें। आपने यह सब कर दिखाया है जो असम्भव जान पड़ता था तथा जिसकी टॉलस्टाय जैसे महानपुरुषों ने कल्पना मात्र की थी। इसी आशा और विश्वास के साथ मैं आपके समक्ष अपनी दुःख भरी गाथा प्रस्तुत करने को उद्यत हुआ हूँ। हमारे दुःखों की कहानी दक्षिण अफ्रीका में आपके साथ जो कुछ किया गया तथा आपके वीर सत्याग्रही भाइयों एवं बहनों के साथ जो कुछ हुआ, उनमें कहीं अधिक करूण एवं कष्टकर है। हम 19,00,000 लोग जो दुःख सह रहे हैं, उन सबों का वर्णन करके मैं आपके कोमल हृदय पर चोट पहुंचाना उचित नहीं समझता। मेरा इतना ही आपसे आग्रह है कि आप स्वयं ही आकर अपनी आँखों से यहां जो कुछ हो रहा है, देखें तब आपको विश्वास हो जायेगा कि भारत के एक कोने में यहां के लोग अंग्रेजी छत्रछाया में रहते हुए भी किस तरह हर प्रकार के अत्याचारों के बीच पशुवत जीवन व्यतीत कर रहे हैं और अधिक नहीं लिखकर मैं आपके वचन की याद दिलाना चाहता हूँ, ''मैं मार्च–अप्रैल में चम्पारण जाऊँगा।'' आपने यह हम लोगों को लखनऊ कांग्रेस के अवसर पर और वहां से लौटते हुए कानपुर में भी दिया था। अब समय आ गया है। चम्पारण के 19,000 दलित–पीड़ित लोग आपके चरण–कमल के दर्शन के हेतु बड़ी ही उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं। उन्हें केवल आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि चम्पारण में आपके चरण रखते ही उनका उसी तरह उद्धार हो जायेगा जैसे भगवान राम के चरणों के स्पर्श से अहिल्या का उद्धार हुआ था।''

अन्ततः महात्मा गाँधी 1917 के कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में भाग लेने के पश्चात् बिहार आये। 15 अप्रैल, 1917 को गाँधी जी चम्पारण पहूंचे। मोतिहारी

आने पर उन्हें बताया गया कि जेसौली पट्टी गांव में रैयत के साथ घोर र्दुव्यवहार किया गया है। वे वहां के लिए रवाना हो गये किन्तु बीच रास्ते में ही जिलाधिकारी के आदेश पर वापस लौटना पड़ा। जिलाधिकारी ने धारा 144 के अन्तर्गत गाँधी को यथाशीघ्र मोतिहारी छोड़ने का आदेश दिया। गाँधी जी ने सरकारी आदेश मानने से इंकार कर दिया। फलतः उन पर उल्लंघन का मुकदमा दायर किया गया। गाँधी जी के चम्पारण आगमन तथा उनके द्वारा पूर्ण आत्मविश्वास के साथ किये गये सरकारी आज्ञा का उल्लंघन ने समूचे इलाके में तुफान खड़ा कर दिया और भोली–भाली जनता इस करिश्माई व्यक्ति के दर्शन को व्याकुल हो उठी। लोगों से खचाखच भरे अदालत में गाँधी जी ने गर्व से अपना अपराध स्वीकारा। इस स्वीकारोक्ति से स्थानीय प्रशासन उलझन में पड़ गई तथा उसने सुनवाई को एक दिन के लिए टाल दिया। अगले दिन गाँधी जी पर से मुकदमा उठा लिया गया। गांधी जी पर मुकदमा उठा लेना बिहारवासियों के लिए ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए महान विजय था तथा स्वयं गाँधी के लिए भारत में सत्याग्रह की पहली जीत।[8] रैयत बड़ी संख्या में अपना बयान लिखवाने लगे। गाँधी जी के पक्ष में उमड़ी भीड़ का दृश्य अभूतपूर्व था। गांधी जी के शब्दों में, ''यह अत्युक्ति नहीं, बिल्कुल शब्दशः सत्य है कि किसानों से इस भेंट में मैं भगवान, अहिंसा और सत्य का साक्षात्कार कर रहा था।''[9] अंग्रेजी सरकार गाँधी जी के आगे झुक गये और अपने अधिकारियों को किसानों के शिकायत की जांच में सहायता देने का आदेश दिया। इस सम्बन्ध में अंग्रेजों को विवश होकर जांच आयोग गठित करना पड़ा। जांच आयोग को समझाने में गाँधी जी को कोई मुश्किल नहीं हुई की तीन कठिया नील खेती प्रणाली समाप्त होनी चाहिए। उन्होंने आयोग को यह भी समझाया कि किसानों से जो पैसा अवैध रूप से वसूला गया है उसके लिए उन्हें हर्जाना दिया जाये। नील बगान मालिक अवैध वसूली का 25 प्रतिशत रकम वापस करने को राजी हो गया। गाँधी जी इसे मान गये इसका कहना था कि 25 प्रतिशत रकम वापस करना भी नील बगान मालिकों के लिए बहुत बड़ी बेइज्जती है। अन्ततः एक दशक के भीतर ही नीलीहों ने चम्पारण छोड़ दिया।

चम्पारण सत्याग्रह का परिणाम तीन कठिया प्रणाली की समाप्ति से भी बड़ा निकला शताब्दियों से निश्क्रिय गांव को जगा दिया। डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, मजहरूल हक, आचार्य कृपलानी, महादेव देसाई, रामनवमी प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह, विन्ध्यवासिनी प्रसाद, धरणीधर बाबू, गोरख प्रसाद, पीर मोहम्मद, राजकुमार शुक्ल आदि लोगों ने चम्पारण में गाँधी जी के साथ काम किया और गाँधी जी के गतिविधियाँ, निर्भयता, वास्तविकता एवं व्यावहारिक दृश्टिकोण से प्रभावित हुए। इन सभी को देश की आगामी स्वतन्त्रता संग्राम में नेता के रूप में प्रान्त को नेतृत्व प्रदान करने हेतु यह

प्रशिक्षण उपयोगी सिद्ध हुआ। उन्होंने कार्यकर्ताओं को बताया कि जब तक वे सार्वजनिक काम में लगे हैं उनकी एक ही जाति होगी, सहकर्मियों की जाति।[10] गाँधी जी की अपनी धारणा के अनुसार यह, ''सत्य और अहिंसा का एक महान प्रयोग था।'' जहां तक चम्पारण के रैयतों का सम्बन्ध था, गाँधी जी के प्रयत्न से उन्हें एक अन्यायपूर्ण अत्याचारी व्यवस्था से मुक्ति मिली। इसका उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने निर्भीकता एवं ईमानदारी का आदर करना सीखा। चम्पारण के ग्रामीण इलाकों में समाज सेवा के प्रायोगिक कार्य सचमुच इस सन्दर्भ में अन्य बड़े आन्दोलनों के महान अग्रदूत थे। गाँधी जी की शोशित पीड़ित जनसमूह की स्थिति में सुधार के माध्यम से स्वराज लेने की भावना वस्तुतः हमारे देशप्रेम का स्वर्णिम आदर्श था। गाँधी जी ने इसकी जड़ सर्वप्रथम बिहार में डालनी चाही थी। यहीं हमारे समग्र सामाजिक गठन को सुदीर्घ विदेशी आधिपत्य के अन्तर्गत जिन बीमारियों ने जर्जर कर रखा है उनसे मुक्त होने का एकमात्रमार्ग है।

चम्पारण सत्याग्रह के दौरान कार्यकर्ताओं में जो परिवर्तन हुआ, उसका उल्लेख करते हुए डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है, ''गाँधी जी की यात्रा का एक परिणाम यह भी हुआ कि तृतीय श्रेणी के डिब्बे में यात्रा करना हमारी दृष्टि में अपमानजनक नहीं रह गया।''[11] चम्पारण में गाँधी जी का कार्य मूलतः मानवतावादी था किन्तु उसके साथ ही राष्ट्रीयता के जागरण का भी अनुप्रेरक था। गाँधी जी के शब्दों में, ''चम्पारण संघर्श इस बात का प्रमाण था कि किसी भी क्षेत्र में जनता की निःस्वार्थ सेवा देश को राजनीतिक दृष्टि से अन्ततः सहायता प्रदान करती है।[12] इसके अतिरिक्त चम्पारण सत्याग्रह ने एक महान लक्ष्य के लिए अहिंसक सत्याग्रह के उपकरण की आश्चर्यजनक क्षमता का उदाहरण प्रस्तुत किया। चम्पारण के लोगों ने जिस प्रकार शान्ति बनाये रखी वह सर्वथा उल्लेखनीय है। चम्पारण सत्याग्रह भारत के स्वतन्त्रता संघर्ष के इतिहास में एक परिवर्तनीय बिन्दू भी माना जाता है। इस सत्याग्रह ने गाँधी जी को देश की जनता के नजदीक आने, उनकी समस्या समझने का भी अवसर प्रदान किया साथ ही जनता की कमजोरियों तथा शक्ति का भी पता इस सत्याग्रह से चला। सत्याग्रह का चम्पारण में सफल प्रयोग किया गया था। राष्ट्रीय संघर्ष के परवर्ती दशकों में इस अस्त्र का भारतवासियों ने कई बार व्यवहार किया और उनकी परिणति महात्मा गाँधी के नेतृत्व में हमारे राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति में हुई। इस प्रकार 1917 में गाँधी जी के नेतृत्व में जो लड़ाई चम्पारण में लड़ी गई वह हमारे आधुनिक इतिहास का धरोहर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. महात्मा गाँधी– (आत्मकथा) माई एक्सपेरीमेंट विथ ट्रूथ

2. महात्मा गाँधी– (आत्मकथा) माई एक्सपेरीमेंट विथ ट्रूथ
3. यंग इण्डिया– 5 जनवरी, 1922
4. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद– चम्पारण में महात्मा गाँधी
5. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद–आत्मकथा
6. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद– सत्याग्रह इन चम्पारण, पृ0–14
7. महात्मा गाँधी– आत्मकथा–पृ0–494
8. महात्मा गाँधी– आत्मकथा
9. महात्मा गाँधी– आत्मकथा
10. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद– महात्मा गाँधी एण्ड बिहार, पृ0–46
11. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद– सत्याग्रह इन चम्पारण, पृ0–201–202
12. महात्मा गाँधी– आत्मकथा–पृ0–408

वराङ्चरित का महाकाव्यत्व

डॉ. देवाश्रय प्रसाद सिंह*

वाराङ्चरित[1] जैन चरित काव्यों में संस्कृत का प्रथम चरितकाव्य है। इसमें 2815 श्लोक विविध वृत्तों में प्रणीत है। प्रस्तुत काव्य आचार्य जटासिंहनन्दी द्वारा विरचित है। इसका रचनाकाल सातवीं शती के उत्तरार्द्ध माना जाता है।[2]

काव्यशास्त्रियों ने काव्य की विभिन्न विधाओं के लक्षण एवं स्वरूप पर व्यापक रूप से विचार किया है। उनकी कृतियों में महाकाव्य के लक्षणों का विशद् वर्णन प्राप्त होता है। भामहकृत काव्यालङ्कार, दण्डीकृत काव्यदर्श, रुद्रटककृत काव्यालङ्कार, आचार्य हेमचन्द्रकृत काव्यानुशासन आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

यहाँ मनीषियों द्वारा प्रतिपादित लक्षणों के आलोक में वाराङ्चरित के महाकाव्यत्व की समीक्षा का प्रयास किया गया है। जो इस प्रकार है–

(1) महाकाव्य की कथा सर्गबद्ध होनी चाहिए। भामह,[3] दण्डी,[4] रुद्रट,[5] हेमचन्द्र[6] आदि काव्यशास्त्रियों ने इसको काव्य का लक्षण माना है। आचार्य विश्वनाथ[7] के अनुसार महाकाव्य में न्यूनतम सर्ग संख्या 8 होनी चाहिए। इस दृष्टि से वाराङ्चरित के 31 सर्ग उसे महाकाव्य की श्रेणी में ले आते हैं।

(2) महाकाव्य का कथानक पौराणिक, ऐतिहासिक या परम्परागत कथा पर अवलम्बित होना चाहिए। आचार्य दण्डी[8] ने उक्त मत का प्रतिपादन किया है। वाराङ्चरित का नायक वराङ्ग जैन परम्परा का एक पौराणिक चरित है।

(3) कथानक में मुख्य पञ्चसन्धियों को प्रयोग अपेक्षित है। भामह,[9] दण्डी[10] आदि सभी आचार्यों के अनुसार महाकाव्य पञ्चसन्धि समन्वित होना चाहिए। आलोच्य कृति में पञ्चसन्धियों की योजना प्राप्त होती है। प्रारम्भ से वराङ्ग के जन्म की कथा में मुख सन्धि की योजना है। वाराङ्ग का युवराज होना और ईर्ष्या का पात्र बनना प्रतिमुखसन्धि है। अश्व द्वारा बराङ्ग का अपहृत होना, कुएँ में गिराया जाना, कुएँ से निःसृत होकर बाहर आना, व्याघ्र, भिल्ल आदि के आक्रमण से उसका रक्षित होना तथा वाराङ्ग का सागरबुद्धि के यहाँ गुप्त रूप से निवास करना, बकुलाधीश का उत्तमपुर पर आक्रमण करना और कुमार द्वारा प्रतिरोध करने तक की कथावस्तु में गर्भ–सन्धि की योजना है। इस सन्धि में फल छिपा हुआ है और 'प्रत्याशा–पताका' का योग भी वर्तमान है। कुमार की दिग्विजय, राज्यस्थापना तथा प्रतिद्वन्द्वी सुषेण द्वारा शत्रुता का त्याग नियताप्ति है। दिग्विजय के कारण

***व्याख्याता, प्राकृत विभाग, वर्द्धमान महावीर कॉलेज, पावापुरी, नालन्दा**